वर्तमान युग में वेदों की प्रासांगिकता

डॉ० राकेश कुमार

गाँव रूड़की, रोहतक

वेद विश्व का प्रथम धर्म ग्रंथ है, इन्हीं को आधार मानकर दूसरे मजहबों, धर्मों व सम्प्रदायों की उत्पत्ति हुई है, जिन्होंने अपनी–अपनी भाषाओं में अपने धार्मिक ग्रंथों की रचना की। वेद ऋषिओं द्वारा प्राप्त ईश्वरीय होने के कारण इनको श्रुति कहते हैं। वेद पुरातन ज्ञान भण्डार हैं, जिनमें मानव की सर्वसमस्याओं का समाधान निहित है। वेदों में ब्रह्मा, देवता, प्रकृति, सृष्टि, विज्ञान, खगोल, भूगोल, गणित, ज्योतिष, इतिहास आदि विषयों का विस्तृत वर्णन है। शतपथ ब्राह्मण के एक प्रकरण अनुसार अग्नि, वायु एवं सूर्य ने तपस्या की, फलस्वरूप अग्नि ने ऋग्वेद, वायु ने यजुर्वेद व आदित्य ने सामवेद का ज्ञान प्राप्त किया, इसलिए इन तीनों वेदों को अग्नि, वायु व आदित्य से जोड़ा जाता है तथा अथर्ववेद को अगिंरा महर्षि से उत्पन्न माना जाता है। एक अन्य श्रुति के अनुसार ब्रह्मा जी के मुखारविन्द से वेदों का जन्म हुआ।

ऋग्वेद के पुरुष सूक्त के अनुसार विराट पुरुष रुपी सर्वाहुत यज्ञ से चारों वेदों का जन्म बतलाया गया है। यथा –

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यतुस्तस्मादजायत।।[1]

वेद मानव सभ्यता, संस्कृति, सम्प्रदाय, जाति–धर्म के प्रथम लिखित दस्तावेज, उपलब्ध सामग्री हैं। वेदों की अठाईस हजार पाण्डुलिपियाँ भारत में पुणे के भण्डारकर ऑरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट में रखी गई है। इनमें ऋग्वेद तीस पाण्डुलिपियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानी गई हैं। जिन्हें युनेस्को ने अपनी विरासत की सूची में शामिल किया है। युनेस्को ने ऋग्वेद की 1800 ई० से 1500 ई० पूर्व की तीस पाण्डुलिपियों को अपनी सांस्कृतिक धरोहर की सूची में भी समाविष्ट किया है और युनेस्को की 158 की सूची में ऋग्वेद का न० 38वाँ है जो समस्त भारतवर्ष के लिए गौरव का विषय है।

भूमिका

चार वेदों के चार उपवेद हैं जिनमें ऋग्वेद का आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गन्धर्ववेद तथा अथर्ववेद का शिल्पवेद सम्मिलित हैं। ऋक् का मतलब स्थिति यजु, रुपान्तरण, साम, गतिशील व अथर्व का अर्थ जड़ होता है। ऋक् को धर्म, यजु को मोक्ष, साम को काम तथा अथर्ववेद को अर्थ की संज्ञा से भी संज्ञापित किया जाता है। इन्हीं चारों वेदों के आधार पर ही धर्मशास्त्र, कामशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं मोक्षशास्त्र की रचना हुई है। ऋग्वेद पद्यात्मक वेद है, इसमें दस मण्डल 1028 सूक्त एवं लगभग 10580 $^{1}/_{4}$ मन्त्र हैं।

इसकी पाँच शाखाएँ हैं – साकल, वास्कल, सांख्यन, अश्वलायन और माण्डुकायन। इस वेद में देवताओं की स्तुति, प्रश्नता एवं स्थिति आदि की जानकारी प्रदान करने वाली ऋचाओं का संग्रह है। इसके अलावा यजुर्वेद मानव को श्रेष्ठ कर्म करने की प्रेरणा देने वाला धार्मिक वेद है, यह वेद गद्यमय है तथा यह कृष्ण एवं शुक्त यजुर्वेद दो भागों में विभाजित है और भी सामवेद संगीतमय वेद है, संगीत भारतीय मूल में आदिकाल से ही द्योतित हो रहा है। 1824 मन्त्रों के इस वेद में 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष सभी मन्त्र ऋग्वेद से ही लिये गए हैं। अथर्ववेद अर्वाचीन वेद है इसमें बीस अध्याय तथा 5687 मन्त्र हैं। थर्व का मतलब होता है कम्पन तथा अथर्व का अर्थ होता है कम्पन रहित अर्थात् ज्ञान से श्रेष्ठ कर्म करके व्यक्ति अकम्पन युक्त (स्थिर बुद्धि) होकर आसानी से मानव के जीवन लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

परमपिता परमेश्वर द्वारा रचित सृष्टि की सबसे नायाब, सबसे अद्भूत रचना मनुष्य है ठीक वैसे ही मनुष्य द्वारा निर्मित सर्वश्रेष्ठ शिल्प यह संसार है। इस चर–अचर जगत् में जीवन धारण कर मनुष्य को अनेक समस्याओं, बाधाओं, दुःखों, पीड़ाओं, मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। इन वैश्विक समस्याओं का एकमात्र समाधान वेद हैं। वेदों में निहित ज्ञान व्यक्ति को अनुशासनात्मक जीवन की कला सिखाने के साथ–साथ आध्यात्मिक ज्ञान से भी मनुष्य को परिपूर्ण करता है, क्योंकि अनुशासन हीनता में दुराचार, व्याभिचार, भ्रष्टाचार, निर्दयता आदि बुराईयाँ पनप रही हैं। प्रत्येक मनुष्य कामना करता है कि समाज से इन सब मुसीबतों से निजात मिले और मेरा घर परिवार सुखी हो, समृद्धि हो, पुत्र कहा मानने वाला हो तथा पत्नी मधु भाषिणी हो। यह हमारी वैदिक परम्परा तथा प्रचानी संस्कृति है। यथा –

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमती वाचं वदतु शान्तिवान्।।[2]

महान् राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री, समाज सुधारक, दार्शनिक, आचार्य चाणक्य ने भी कहा है कि जिसका बेटा अनुशासन पालन हार, पत्नी, पति का अनुकरण करने वाली, अर्थात् पति का कहा मानने वाली, धन–वैभव सम्पन्न व्यक्ति का स्वर्ग भूमि पर ही है। यथा –

यस्य पुत्रो वशीभूतो भार्या छन्दानुगामिनी।
विभवे यश्च संतुष्टस्य स्वर्गम् इहैवहि।।[3]

हमारे वैदिक व धार्मिक ग्रन्थों में मनुष्य के कर्त्तव्य क्या हैं ? किन–किन बातों का अनुकरण कर मनुष्य जीवन को अनुशासित, कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदार, परिपूर्ण बनाने का संदेश देते हुए पारिवारिक जीवन को सुखी, समृद्धिपूर्ण, भावनाओं का अनुगामी बनाने का संदेश आचार्य चाणक्य ने भी अपने शब्दों के माध्यम से संसार के सम्मुख मधुर एवं सरल भाषा में दिया है। यथा –

''ते पुत्रा ये पितुर्भक्ताः स पिता यस्तु पोषकः।

तन्मित्रं यस्य विश्वासः सा भार्या यत्र निवृत्तिः।।''[4]

इस प्रकार वेद तथा महर्षि ग्रंथ हमें प्रेरणा देते हैं कि सुखी, समृद्ध, विकसित, आनंद अभिमुख जीवन के लिए परिवार एवं समाज में परस्पर उत्तरदायित्व तथा सहयोग की भावना नितान्त आवश्यक है। इन सब विषयों के वर्णन के अलावा वेद हमें बताते हैं कि भारतीय समाज को मजबूत बनाने के लिए कार्यों के आधार पर समाज को चार वर्गों में विभाजित किया गया है, जो वर्तमान समय की आवश्यकता को भी पूरा करता है, इस सन्दर्भ में ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में भी कहा है। यथा –

''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्य पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।''[5]

इस वेदमन्त्र के अनुसार विराट पुरुष के मुखारविन्द से ब्राह्मणों का जन्म, भुजाओं से राजन्य अर्थात् क्षत्रियों का, जंघाओं से वैश्यों का तथा पैरों से शूद्रों का जन्म हुआ, ऐसा स्वीकृत किया गया है, परन्तु आधुनिक विज्ञान मानता है कि जब तक स्त्री एवं पुरुष का संयोग न बने तक तक संतान उत्पत्ति की कल्पना भी नहीं की जा सकती क्योंकि जब शुक्राणु का (नर युग्मक) अंडाणु (मादा युग्मक) से मेल होता है तो इनमें से एक शुक्राणु मादा युग्मक अंडाणु से संलपित हो जाता है, इन दोनों का आपस में यह मेल निषेचन कहलाता है। निषेचन के परिणाम स्वरूप युग्मनज बनता है। जो विकास को प्राप्त कर भ्रूण के रूप में प्राप्त होता है। यह भ्रूण गर्भाश्य की दीवार में रोपित होकर बढ़ता रहता है। फलस्वरूप शनैः शनैः हाथ, पैर, आंख, कान और नाक इत्यादि शारीरिक अंग विकसित हो जाते हैं। भ्रूण की विकसित इस अवस्था को जो शरीर के सब अंगों की सही से पहचान करने में समर्थ होती है गर्भ कहलाती है और जब गर्भ पूर्णरूप से तैयार, विकसित हो जाता है तब माँ के द्वारा सभी वर्गों के शिशुओं का जन्म होता है,[6] ब्रह्मा के द्वारा मुखादि से नहीं।

वेदों के अनुसार चार समाज चार वर्गों में बंटा हुआ है तथा प्रत्येक वर्गो का अपना–अपना व्यवसाय निर्धारित किया गया है जैसे ब्राह्मण वह है जो वेदादि धार्मिक ग्रन्थों का पठन–पाठन, यज्ञ का संपादन करता करवाता है, दानादि क्रियाओं से युक्त, कर्मो का बिना किसी दबाव, भेदभाव, लालच, स्वार्थ के सम्पन्न करता है। यथा –

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।

दानं प्रतिग्रहं चैव ब्रह्मणनामकल्पयत्।।[7]

इस तरह से क्षत्रिय का भी अपना कर्म करने का ढ़ग व सीमा बतलायी गयी है, वह प्रत्येक मनुष्य क्षत्रिय है, जो अपने से दुर्बलों की सहायता करता हो, उनके प्रति दयाभाव रखता है, उनके प्रति अपना स्नेह बरसाता हो, ऐसे व्यक्ति का दूसरे से कभी भी वैर भाव नहीं रहता। क्षत्रिय को चाहिए कि वह निर्धन व्यक्ति

को अपने धन से दान देकर कृतार्थ करे, क्योंकि धन की तीन गतियाँ हैं, दान, भोग एवं नाश। प्रथम अर्थात् दान को अपना–ना सद्बुद्धि का कार्य है। क्षत्रिय को पर्यावरण की शुद्धि हेतु यज्ञ भी करना चाहिए ताकि शुद्ध एवं स्वच्छ वातावरण में जीवन निर्वाह हो सके। क्षत्रिय को बौद्धिक विकास एवं आध्यात्मिक ज्ञान के लिए विद्वान् गुरु के पास रहकर वेदाभ्यास भी करना चाहिए तथा अपनी शक्ति, साहस, समय, चिन्तन, सामर्थ्य आदि को उन्नति बनाये रखने के लिए केवल संतति उत्पत्ति के लिए ही उपभाग, ऐश्वर्थादि विषयों का सेवन करना चाहिए। यथा –

''प्रजानां रक्षणं दानमिज्याऽध्ययनमेव च।
विषयेष्वप्रशक्ति क्षत्रियस्य समासतः।।''[8]

पशुओं का रक्षण, पालन, दान देना, यज्ञ करना, वेदादि धार्मिक शास्त्रों का अध्ययन करना, वाणिज्य–व्यापार करना आदि कर्मों का संपादन करना वैश्यों का परम कर्त्तव्य है। यथा –

''पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
वाणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।।''[9]

मनुस्मृति में उपरोक्त तीनों वर्णो की सेवा में लीन रहना शूद्रों का कर्त्तव्य बतलाया गया है। यथा –

''एकमेव तु शुद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
ऐतषामेव वर्णानां शुश्रषामनसूयया।''[10]

इन सब सन्दर्भों को जानकर ऐसा प्रतीत हो रहा है कि उस समय लोगों का जीवन संघर्षशील था और उन्हें अत्यन्त विकसित होने की आवश्यकता थी, परन्तु वर्तमान युग में चारों वर्गों के रहन–सहन, काम–का, आय–व्यय के साधनों में बहुत भारी परिवर्तन हुआ है, जिससे लोगों के धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक जीवन में आमूल–चूल फेर–बदल हुआ है, जिसकी भारतवर्ष के विकास के लिए नितान्त आवश्यकता है। अतः मनुष्य को देश, स्थान, समाज एवं स्वयं के कल्याण हेतु सत्य, धर्म निष्ठा, इमानदारी पूर्ण, सद्–व्यवहार, परोपकार युक्त कर्म करते रहना चाहिए, क्योंकि वही व्यक्ति समाज में सुखी एवं समृद्धि सम्पन्न जीवन जीने का अधिकारी है। देववाणी वेद भी इसी बात का समर्थन करती है। यथा –

''सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यं हुरोगात्।
आयोर्हि स्कम्भ उपमस्य नीतो पथांविसर्गे धरुणेषुतस्थौ।।''[11]

ऋग्वेद के इस मन्त्र में हिंसा, चोरी, व्यभिचार, मद्यपान, जुआ, असत्य, भाषण आदि सामाजिक बुराईयों पर प्रकाश डाला है और आदेश दिया है कि मुमुक्षु, व्यक्ति को ऐसे असद्, कलिंकत, दुष्परिणामी, व्यवहारों से स्वयं को दूर रखना चाहिए।

वैदिक संस्कृति काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, मद इन छः विकारों से मनुष्य को दूर रहने के लिए निवेदित करती हुई निर्देश रुप स्पष्ट तथा अवगत कर कहती है कि गरुड़ के समान मद (घमण्ड) गीध के समान लोभ, कोक की तरह काम, श्वानवत् मत्सर, उलूक के सदृश मोह तथा वृकवत् (भेड़िया) क्रोध को तिलाञ्जिली दे देनी चाहिए। इन बुराईयों को शत्रु में भी पनपने नहीं देना चाहिए। यथा –

''उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जाहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपुर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्रमृणरक्ष इन्द्र।।''[12]

वेद मानव को उपदेश देता है कि मन, वचन एवं कर्म से किसी का भी बुरा नहीं करना चाहिए। जिह्वा के अग्रभाग में स्वाद (रस) को चखने का सामर्थ्य होता है, तो हमारी जिह्वा के अग्रभाग एवं मूलभाग में मधुरता होवें। मानव का समस्त शरीर कल्याणकारी, परोपकारी, उत्कृष्ट भावना से पूर्ण, सहृदयता युक्त, सहजता एवं विनम्रता वाला होवें जिससे उसको समाज में एक नयी पहचान प्राप्त हो सके। यथा –

जिह्वाया अग्रे मधु में जिह्वामूले मधूलकम्।
ममदेह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि।।
मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधु संदृशः।।[13]

मन, वचन कर्म से मधुर सद्व्यवहार, सभ्य व्यवहार एवं भद्र व्यवहार करने को यजुर्वेद में भी अनेक मन्त्रों का उल्लेख प्राप्त होता है, तो हमारी विरासत के रुप धारण कर मानव को खुशहाल जीवन यापन करने का संदेश प्रदान करता है, जिसका अनुसरण करके ही हम विश्व को अपनी सभ्यता, संस्कृति का लोहा मनवाकर विश्वगुरु के परम पद पर आरूढ़ हो सकते हैं। यथा –

''भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगगैस्तुष्टुवा संस्तनूभिव्यशेमहि देवहितं यदायुः।।''[14]

निष्कर्ष

वास्तव में यह कह सकते हैं कि वेद के द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का अनुकरण करने वाला भक्त वर्तमान समय में अनेक कुकृत्यों, सामाजिक, मानसिक एवं शारीरिक बुराईयों, समस्याओं से बचकर एक श्रेष्ठ राष्ट्र निर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है – जो हमारी वैदिक संस्कृति का अभिन्न अंग है। वेदों में वर्णित मन्त्र किसी औषधि से कम नहीं हैं विश्व में ऐसी कोई भी समस्या नहीं है, जिसका उपचार वैदिक परम्परा एवं वैदिक संवेदना की पहुंच से परे हो। मैं परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वेदज्ञान और मनुष्य का यह स्नेह निरन्तर बना रहे तथा समस्त विश्व में शांति व अमन का प्रचम लहराता रहा।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भागभवेत्।।[15]

सन्दर्भ सूची

[1] ऋग्वेद, पुरुष सूक्त 10.90.9
[2] अथर्ववेद, 3.30.2
[3] चाणक्यनीति, 2.3
[4] वही, 2.4
[5] ऋग्वेद, पुरुष सूक्त, 10.90.12
[6] NCERT, VIIIth Class Book, p. 102, 104, 105
[7] मनुस्मृति, 1.88
[8] वही, 1.89
[9] वही, 1.90
[10] वही, 1.91
[11] ऋग्वेद, 10.5.6
[12] वही, 7.104, 22
[13] अथर्ववेद, 1.34.2–3
[14] यजुर्वेद, 25.21
[15] शक्ल यजु० 36 अध्याय